पंडित अति सिगरी पुरी मानहु गिरा गति गूढ़।
सिंह चढ़ी जनु चंडिका मोहति मूढ अमूढ़॥
मोहति मूढ़ अमूढ़ देव संग अदित ज्यौं सोहै।
सब शृंगार सदेह मनो रति मन्मथ मोहै॥
सबै सिंगार सदैह सकल सुख सुखमा मंडित।
मनो शची बिधि रची विविध विधि वर्णत पंडित॥47॥

शब्दार्थ—सिगरी = सारी। गिरा = सरस्वती, वाणी। गूढ़ = छिपाना। मनमय = मन्मथ, कामदेव। सुखमा = सुषमा। शची = इन्द्राणी। विधि = ब्रह्मा। विविध विध = अनेक प्रकार से।

प्रसंग—इस छन्द में कवि ने अयोध्या नगरी की महत्ता का वर्णन किया है।

व्याख्या—सारी नगरी अत्यन्त पंडित है; अर्थात् इस नगरी में सभी विद्वान् लोग रहते हैं जिसके कारण यह मानो सरस्वती का साकार रूप बनी हुई है जिसने अपनी वाणी की गति को छिपा रखा है। पंडितों के अतिरिक्त इसमें इतने शूरवीर रहते हैं जिससे यह ऐसी प्रतीत होती है मानो सिंह पर चढ़ी हुई चण्डी हो जिसके रूप को देखकर मूर्ख भय से और विद्वान् श्रद्धा से मोहित हो जाते हैं। मूर्ख और पंडितों को मोहित करती हुई यह इस प्रकार लगती है मानो देवताओं के साथ अदिति शोभायमान हो। अपनी साज-सज्जा एवं अतुल सौन्दर्य के कारण यह ऐसी प्रतीत होती है मानो सारे शृंगारों से सजकर और देह धारण करके रति कामदेव के मन को मोह रही हो।

साकार रति के समान सब प्रकार के शृंगार से युक्त होकर यह नगरी सब प्रकार के सुख और शोभा से सजी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है मानो ब्रह्मा ने अयोध्या के रूप में इन्द्राणी की रचना की हो। सभी विद्वान् इस नगरी की महिमा का अनेक प्रकार से वर्णन करते हैं।

विशेष—अलंकार-योजना के मोह के कारण भावपक्ष को क्षति हुई है।

अलंकार—उत्प्रेक्षा।